International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 16-02-2021, Accepted: 05-03-2021, Published: 24-04-2021
Volume 7, Issue 2, 2021, Page No. 106-114

विश्व की प्राचीनतम जीवंत भारतीय संस्कृति: रामधारी सिंह 'दिनकर' के गद्य के आलोक में

तरुण पालीवाल
शोधार्थी, हिंदी विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश
भारतीय संस्कृति के इतिहास को लेकर अनेक भ्रांत धारणाएँ प्रचलित है। यहाँ पर जितनी भी जातियों के वंशज निवास कर रहे हैं। कतिपय विद्वानों ने उन सभी को भारत के बाहर की जातियाँ घोषित करने का दुष्कर्म किया है। जबकि, भारतभूमि पर मनुष्य का अस्तित्व लगभग तीन लाख वर्ष पुराना है। जिसका प्रमाण बड़ोदा राज्य के वादनगर (वर्तमान में वड़नगर) में प्राप्त आदिनीग्रो का तीस इंच लंबा कंकाल है। हालाँकि, यह प्रश्न अक्षुण्ण है कि मनुष्य कहाँ पर अस्तित्व में आया? किंतु, विज्ञान के अनुसार, उसके वर्तमान स्वरूप का गठन लगभग तीन लाख वर्ष पूर्व हुआ है। अत: न तो यह कहा जा सकता है कि भारत में मनुष्य का जन्म हुआ और न यह कि प्राचीन समय में यहाँ उसका कोई अस्तित्व ही नहीं था। जनविज्ञान और भाषा-विज्ञान के आधार पर भी भारत में विश्व की प्रमुख तीनों नस्लों और भाषाओं के वंशज उपस्थित है। अत: वे यहाँ आए अथवा यहाँ से बाहर गए? यह प्रश्न अभी अनसुलझा है। दिनकर इस संदर्भ में अधिक कुछ नहीं कहकर यह कहते है कि भारतभूमि पर लाखों वर्षों से मनुष्य का अस्तित्व रहा है।
भारतीय संस्कृति के मूल उत्स और निर्माता के प्रश्न पर वे मौन है। वे किसी एक जाति को इसका श्रेय देने के समर्थन में नहीं हैं। नीग्रो को इसकी आदिम जाति स्वीकार करते हैं। आग्नेय जाति द्वारा इस संस्कृति के स्वरूप गठन की प्रकिया आरंभ हुई। जिसे कालांतर में द्रविड़ और आर्य जाति ने पूर्णता प्रदान की। द्रविड़ जाति को वे मूलत: भारतीय मानते हैं। आर्य जाति कहीं बाहर से आई अथवा भारत में ही जन्मी इस पर वे निरुत्तर हैं। किंतु, वर्तमान भारतीय संस्कृति के स्वरूप निर्माता के रूप में उसके प्रति कृतज्ञ अवश्य है। अत: वे इसको विश्व की सबसे प्राचीन जीवित संस्कृति मानते हैं। उन्हें इस बात का अभिमान भी हैं।

मूलशब्द: भारतीय संस्कृति, जाति, प्राचीन जीवित संस्कृति

प्रस्तावना

रामधारी सिंह दिनकर का रचनाकाल लगभग छियालीस वर्षों का रहा हैं। इस दीर्घ कालखंड में उनकी कलम ने साठ से अधिक रचनाओं का प्रणयन किया। विधाओं और विषयों की दृष्टि से इनका रचना-संसार अत्यंत व्यापक और गहन विचारों से समृद्ध हैं। जिसमें उनकी कविताओं को अत्यधिक प्रसिद्धि प्राप्त हुई। विश्व-साहित्य ने बीसवीं सदी की सौ सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों में उनकी 'कुरुक्षेत्र' प्रबंध काव्य रचना को चौहत्तरवाँ स्थान

देकर सम्मानित किया है। 'उर्वशी' प्रबंध काव्य पर प्रतिष्ठित ज्ञानपीठ पुरस्कार इन्हें प्राप्त हैं। विद्वान आलोचक सर्वसम्मति से इनको आधुनिक हिंदी काव्य की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक काव्यधारा का प्रतिनिधि कवि स्वीकार करते हैं। 'राष्ट्रकवि' की उपाधि प्राप्त करने वाले ये दूसरे रचनाकार हैं। पद्य रचनाओं के अतिरिक्त इन्होंने गद्य की विवध विधाओं में भी अपने विचार प्रकट किए हैं। 'संस्कृति के चार अध्याय' नामक शोधपरक ग्रंथ पर 'साहित्य अकादमी' जैसा प्रतिष्ठित सम्मान इसकी पुष्टि करता है। इसके अलावा 'हमारी सांस्कृतिक एकता', 'भारत की सांस्कृतिक कहानी', 'भारतीय एकता' आदि रचनाओं में भारतीय संस्कृति मुख्य विषय रही है। जिसमें उन्होंने इसके मूल उत्स, स्वरूप, संगठन और विकासक्रम को आलोचित करने का स्तुत्य कार्य किया हैं।

विश्व में अनेक स्थानों पर मनुष्य-जाति की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के भग्नावशेष प्राप्त हुए हैं। इनमें मिस्त्र, मेसोपोटामिया, सुमेर, बेबीलोन, असीरिया, सिंधु, हवान-हो, यूनान, अमेरिका, रोम इत्यादि नाम प्रमुख हैं। किंतु, जहाँ ये अवशेष मिले हैं, प्रत्युत वहाँ पर कालांतर में विकसित संस्कृति पर उनका कोई विशेष प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता है। दिनकर मानते हैं कि संसार में जितनी भी प्राचीन संस्कृतियाँ अस्तित्व में रही, उनमें से केवल सिंधु-घाटी का ही प्रभाव उसके आगे विकसित संस्कृति ने ग्रहण किया। इस दृष्टि से वे भारतीय संस्कृति को विश्व की सबसे पुरानी जीवित संस्कृति बताते हैं- "भारत दुनिया के सबसे पुराने देशों में से है, यानी सभ्यता और संस्कृति इस देश में उस समय फ़ैल चुकी थी, जबकि दुनिया का बहुत अधिक भाग असभ्य था। लोगों का अंदाज है कि आज से आठ हजार साल पहले भी भारत में सभ्यता थी, जिसके निशान मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाइयों में मिलें है।"[1] अत: इस दृष्टि से भारतीय संस्कृति का इतिहास आठ हजार वर्ष पुराना स्वीकार करने में विद्वानों को कोई समस्या नहीं होगी। इस संदर्भ में शोध प्रगति पर है। इस कारण यह कालक्रम कुछ ओर पीछे भी ठहर सकता है।

अत्यधिक प्राचीन होने के कारण इसका इतिहास लेखन एक दुष्कर कार्य है। दिनकर इस हेतु इतिहास की अपेक्षा सांस्कृतिक-दार्शनिक दृष्टिकोण से यह कार्य करते हैं। 'संस्कृति के चार अध्याय' पुस्तक के तीसरे संस्करण में वे लिखते हैं- "यह महल साहित्य और दर्शन का है। इतिहास की हैसियत यहाँ किरायेदार की है। किरायेदार का आदर तो मैं करता हूँ, किंतु महल पर उसे कब्ज़ा देने की बात मैं नहीं सोच सकता। मैं कोई पेशेवर इतिहासकार नहीं हूँ।"[2] भारत की सांस्कृतिक इतिहास की धारा में इसके उत्स को लेकर विद्वानों में पर्याप्त मतभेद रहे हैं। इसमें एक धारा पश्चिम के विद्वानों की है; जो भारतीय संस्कृति का आरंभ आर्यों के आगमन से बताते हैं। इस दृष्टि से इसका इतिहास कुछ पैंतीस सौ साल पुराना माना गया है। लेकिन, इस धारणा का खंडन करती हुई महादेवी वर्मा लिखती है- "विदेशी शोधकर्ता अपने पूर्वाग्रह के कारण इसे 3500 वर्ष से दूर तक नहीं जा सके, क्योंकि बाइबिल के अनुसार सृष्टि की रचना की अवधि ही 7500 वर्ष के लगभग है।"[3] इसका मुख्य कारण यह है कि भारत पर यूरोपियन जातियों का शासन लगभग ढाई सदी का रहा है और उन्होंने ही पहले-पहल भारतीय संस्कृति का इतिहास लिखा। कोई भी शासक जाति अधीन जाति की उच्चता को स्वीकार नहीं कर सकती है। इसलिए, इसका इतिहास लिखते समय, वे अपने पूर्वाग्रहों से मुक्त नहीं हो पाए तथा उन्होंने ऐसी असत्य और भ्रामक धारणाएँ प्रस्तुत की।

भारतीय संस्कृति के आरंभ को लेकर दिनकर के विचार इस प्रकार है- "भारतीय संस्कृति के मूल तक जाने की राह अभी तक खुली नहीं है, न

इसकी कोई संभावना दीखती है कि वहाँ तक जाने का कोई सुस्पष्ट मार्ग कभी भी पाया जा सकेगा। केवल अनुमान के बल पर हम जानते हैं कि आर्यों के आने के पूर्व इस देश में जो लोग बसते थे, वे सुसभ्य थे, नगर सभ्यता के स्वामी थे और उनका धर्म भी काफी विकसित हो चुका था।"[4] इससे आगे वे कहते हैं कि, "हिंदू संस्कृति का मूल खोजना तो गंगा के उद्गम खोजने के समान दुस्तर कार्य है। जिसे हम हिंदुत्व कहते हैं, वह न तो सिर्फ आर्यों की रचना है, न द्रविड़ों की और न यही दावा किया जा सकता है कि उसके भीतर उन नीग्रो और औष्ट्रिक जातियों की कोई देन नहीं है, जो जातियाँ आर्यों और द्रविड़ों से भी पूर्व इस देश ने आकर बसी थी।"[5] अत: वे इसके मूल उत्स के प्रश्न को अनसुलझा ही छोड़ देना उचित समझते हैं। क्योंकि, यहाँ लाखों वर्षों से मनुष्य का अस्तित्व रहा है। इसलिए, किसी कालखंड अथवा जाति-विशेष को इसका निर्माता घोषित करना अत्यंत दुस्तर हो जाता है।

विश्व में अपने अस्तित्व की खोज में मनुष्य ने कई प्रयोग किए और अपने-अपने सिद्धांत प्रतिपादित किए। इन्हीं में से एक नस्लीय सिद्धांत है। इसके अंतर्गत मनुष्य के शारीरिक गठन के आधार पर उसकी नस्ल की पहचान की जाती थी। अठारहवीं सदी के उत्तरार्ध तक आते-आते इस सिद्धांत के अर्थ और प्रयोग में परिवर्तन हो गया। उसके बाद से इसका अर्थ विशेषत: रंग-रूप से संबंधित भेदभावपूर्ण नीतियों के संदर्भ में प्रयोग किया जाने लगा। किंतु, यहाँ इसका अर्थ केवल मनुष्य के शारीरिक गठन का अध्ययन करने वाले सिद्धांत के रूप में ही प्रयोग किया जा रहा है। दिनकर इस सिद्धांत से विकसित विज्ञान की शाखा का परिचय देते हुए लिखते हैं- "दुनिया में जितनी भी जातियाँ बसती है, उनकी मूल-नस्लों की पहचान भाषा और शरीर के गठन को देखकर की जाती है और इस विषय का अध्ययन अलग-अलग शास्त्रों के रूप में विकसित हो गया है, जिनके प्रयोग से मानव-जाति के बहुत पुराने इतिहास की रचना में बहुत सहायता मिली है।"[6] अत: भाषा के आधार पर अध्ययन करने वाली शाखा भाषा-विज्ञान तथा शरीर के गठन के आधार पर अध्ययन करने वाली मानुषमिति अथवा जनविज्ञान नाम से जानी जाती है।

जनविज्ञान की मान्यता है कि विश्व की सभी जातियाँ तीन प्रकार की प्रमुख नस्लों से जन्मीं है। पहली गौर वर्ण वाली नस्ल जिसे काकेशियन नाम दिया गया है। दूसरी पीत वर्ण वाली नस्ल जिसे मंगोल कहा गया है। तीसरी श्याम वर्ण वाली वाली नस्ल जिसे इथोपियन कहा गया है। दिनकर इन तीनों नस्लों का अस्तित्व स्वीकार करते हैं। वे इन तीनों के प्रतिनिधियों के अस्तित्व से भारतीय जनता की रचना भी मानते हैं- "रंग की दृष्टि से संसार में तीन प्रकार के लोग हैं- गोरे, काले और पीले। बाकी रंग इन्हीं रंगों में से किसी न किसी की, कम या ज्यादा, छाँह लिए हुए है और वे, अकसर दो रंगों के मिश्रण से अथवा जलवायु के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुए है। भारतीय जनता में इन तीन रंगों के प्रतिनिधि मौजूद है और रंगों की दृष्टि से भी भारतीय जनता विश्व-मानवता का अद्भुत प्रतीक मानी जा सकती है।"[7] परंतु, जनविज्ञान अभी तक यह बताने में असमर्थ है कि इनमें से कौनसी नस्ल पहले जन्मी और कौनसी बाद में? अत: यह प्रश्न अभी अनसुलझा ही है। फिर भी, विश्व में तीन नस्लें पाई जाती है और तीनों के वंशज भारत में है। इस दृष्टि से भारत में मनुष्य के अस्तित्व की प्राचीनता की प्रामाणिकता अधिक स्पष्ट हो जाती है।

दिनकर ने आधुनिक जनविज्ञान के आधार पर भारतीय जनता में विश्व की तीनों प्रमुख नस्लों को स्वीकार किया है। इसके उपरांत वे भारत में चौथी नस्ल भी बताते हैं- "एक दूसरी दृष्टि से

विचार करने पर भारतवर्ष में चार प्रकार के लोग मिलते हैं। एक तरफ के लोग वे हैं जिनका कद छोटा, रंग काला, नाक चौड़ी और बल घुँघराले होते हैं। इस जाति के लोग अकसर जंगलों में बसते हैं। ये ही उन आदिवासियों की संतान हैं जो आर्यों और द्रविड़ों के आगमन के पूर्व इस देश में आकर बसे थे और उन जो शायद, जंगली जीवन के आदी होने के कारण अब तक भी शहरों से दूर जंगलों में ही रहने में सुख मानते हैं।"[8] आधुनिक काल में इन्हें भारतीय संविधान में अनुसूचित जनजाति कहकर संबोधित किया गया है। भारत में द्रविड़ जाति से पहले इनका ही प्राधान्य हुआ करता था। द्रविड़ जाति इथोपियन परिवार से संबंधित है। दिनकर इनके बारे में लिखते हैं- "एक दूसरी तरफ के लोग हैं, जिनका कद छोटा, रंग काला, मस्तक लंबा, सिर के बाल घने और नाक खड़ी और चौड़ी होती है। रंग और कद में ये, प्राय: आदिवासी लोगों से थोड़ी समानता रखते हैं, किंतु ये उनसे बिलकुल भिन्न हैं।"[9]

इसी क्रम में वे तीसरी जाति का उल्लेख आर्यों के रूप में करते हैं, जो कतिपय काकेशियन नस्ल से संबंधित हैं। क्योंकि दिनकर जो उनके वर्ण का जो वर्णन करते हैं उसके अनुसार यही अनुमान उचित ठहरता है। उनका वर्णन वे इस प्रकार लिखते हैं- "तीसरी जाति के लोगों का कद लंबा, वर्ण गेहूँआ या गोरा, दाढ़ी-मूँछ घनी, मस्तक लंबा तथा नाक पतली और नुकीली होती है। ये आर्य जाति के लोग हैं।"[10] इसी प्रकार वे चौथी जाति का वर्णन करते हुए उन्हें स्वयं ही स्पष्ट मंगोल नस्ल का बताते हैं- "इनका मस्तक चौड़ा, रंग काला-पीला, आकृति चिपटी तथा नाक चौड़ी और पसरी हुई होती है। इनके चेहरे पर दाढ़ी-मूँछ कम उगती है। ये मंगोल जाति के लोग हैं, जो भारत में तिब्बत और चीन से उस समय आए जब आर्य यहाँ पुराने हो चुके थे।"[11] अत: इस प्रकार दिनकर भारत में चार नस्लों के सिद्धांत का प्रतिपादन करते हैं। जिसमें से तीन नस्लों को जनविज्ञान स्वीकृति प्रदान करता है। चौथी जिस नस्ल की बात दिनकर करते हैं उसके संबंध में कोई विशेष टिप्पणी दिनकर भी नहीं करते हैं। हाँ, उसे वे भारत की सबसे प्राचीन नस्ल जरुर स्वीकार करते हैं।

दिनकर भारत मनुष्य के अस्तित्व के निर्धारण में नस्लीय सिद्धांत का ही आधार नहीं लेते। वे इस संबंध में भाषा विज्ञान का भी विश्लेषण करते हैं। इस आधार पर भारत में जिन्होंने सबसे प्रामाणिक शोध-कार्य सुनीतिकुमार चटर्जी ने किया हैं। वे चटर्जी जी के उद्धरण से अपनी स्थापना की प्रतिपुष्टि करते हैं। भारत में जिन तीन नस्लों का वर्णन दिनकर करते हैं, उन्हें लेकर चटर्जी लिखते हैं- "भारतीय जनता की रचना जिन लोगों को लेकर हुई हैं, वे मुख्यत: तीन भाषाओं में विभक्त किए जा सकते हैं, अर्थात औष्ट्रिक अथवा आग्नेय, द्रविड़ और हिंद-यूरोपीय (हिंद-जर्मन)। नीग्रो से लेकर आर्य तक जो भी लोग इस देश में आए उनकी भाषाएँ इन भाषाओं के भीतर समाई हुई हैं।"[12] अत: भाषा-विज्ञान भी तीन भाषा-भाषी लोगों से भारतीय जनता की रचना मानता है।

दिनकर के अनुसार भारत में आने वाली पहली जाति नीग्रो थी। यह संभवत: अफ्रीका से आई बताई गई है। इस संदर्भ में वे लिखते हैं- "भारत में पहला आगमन नीग्रो जाति का था। यह जाति भारत में अरब-ईरान के किनारे-किनारे चलकर पश्चिम में अथवा, संभवत: अफ्रीका से आई थी। इसकी एक शाखा भारत से निकलकर आस्ट्रेलिया भी गई, जहाँ उसके वंशज अब तक मौजूद हैं। भारत से आस्ट्रेलिया जाते हुए रास्ते में इंडोनेशिया. पोलीनेशिया और मलेनेशिया में भी इस जाति की टुकड़ियाँ रह गई। मलाया, फिलीपींस, न्यूगिनी और अंडमान में भी नीग्रो हैं, वे भारत से ही गए हुए हैं। लेकिन भारत में नीग्रो अब लगभग खत्म हो चुके हैं।"[13] इस दृष्टि से

भारतीय संस्कृति के सबसे पुराने वंशज नीग्रो माने जा सकते हैं। भारत में इनके बचे हुए अवशेषों के साथ वे इस तथ्य को भी उजागर करते हुए लिखते हैं- "अब थोड़े से निशान दक्षिण भारत की आदिम जातियों में अथवा असम की नागा जाति में बचे हुए हैं। नीग्रो लोग सभ्यता के आदि सोपान पर थे। वे अपना भोजन खेतों से उत्पन्न न करके, जंगलों में घूमते हुए फल-फूल तोड़कर या जीवों को मारकर प्राप्त करते थे। जब आर्य इस देश में आए, उस समय नीग्रो जाति समाप्त हो चुकी थी। नीग्रों जाति का काल विद्वान आज से सात हजार वर्ष पूर्व मानते हैं, किंतु संभव है, यह काल आज से दस हजार वर्ष पूर्व रहा हो।"[14] दिनकर नीग्रो के अस्तित्व को दस हजार साल पुराना बताते हैं।

उनके अनुसार, नीग्रो जाति के पश्चात औष्ट्रिक या आग्नेय जाति का आगमन भारत में हुआ। इसका नाम आग्नेय, इसलिए पड़ा क्योंकि ये लोग यूरोप के आग्नेय कोण के मूल निवासी रहे थे। न केवल भारत अपितु दक्षिण-पूर्वी एशिया की कुल जनसंख्या में इनका बड़ा भाग है। इस संबंध में वे बताते हैं कि, "भारतवर्ष में कोल और मुंडा जाति के लोग, असम, बर्मा और हिंदचीन की मौन-खमेर जाति, निकोबार द्वीप के निकोबरी तथा इंडोनेशिया, मलेशिया और पोलीनेशिया के बहुत से काले लोग इसी औष्ट्रिक वंश की मिश्रित संतान है। असल में काश्मीर से लेकर प्रशांत महासागर के पूर्वी द्वीप-समूह तक जो भी पक्के काले और वनवासी लोग हैं, उन्हें औष्ट्रिक जाति का ही उत्तराधिकारी समझना चाहिए।"[15] भारत के संविधान में इनको अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्ग में वर्णित किया गया है। इन्हीं दोनों जातियों के द्वारा भारत में पहले-पहल समाज की नींव डाली गई थी। उनकी अपनी संस्कृति और भाषा थी। इसका प्रमाण देते हुए दिनकर कहते हैं- "इनके पूर्वज कभी इस देश के शासक थे, जिसका प्रमाण यह है कि मारवाड़ के राजा राज्याभिषेक के समय किसी भील के अँगूठे से रक्त लेकर उसका तिलक लगाते थे।"[16] इसी संदर्भ में भाषाई प्रमाण भी वे उपस्थित करते हैं और लिखते हैं- "जब आर्य आए थे, तब औष्ट्रिक भाषा इस देश में खूब प्रचलित थी और उस भाषा के अनेक शब्दों ने आर्य भंडार में प्रवेश पा लिया। विशेषत: वन और वनजंतु (Flora and Founa) संबंधी आर्य भाषाओं में ऐसे कितने ही शब्द है, जिनकी व्युत्पत्ति औष्ट्रिक धातुओं से बतलाई जाती है।"[17] इन प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि आग्नेय जाति की सभ्यता आधुनिक संदर्भो में भले ही पिछड़ी हुई रही हो, लेकिन उन्होंने सभ्यता का विकास आरंभ कर दिया था। यहाँ से भारतीय संस्कृति के वर्तमान रूप भी निर्माण आरंभ हुआ।

श्रीकृष्ण ओझा भी भारतीय संस्कृति के आरंभिक विकास में इन जातियों के योगदान को स्वीकार करते हैं। वे इन जातियों के काल को 'प्रभात-काल' नाम देते हैं। इनका मत हैं कि, "यह निग्रो, निषाद व द्रविड़ सभ्यता का है, जिसका ईस्वी पूर्व 8000 से ईस्वी पूर्व 3000 तक का माना गया है। सभ्यता के इस सबसे पहले युग को प्राचीन पाषाण या पूर्व प्रस्तर युग भी कहते हैं। यह तो मानो इस भूमि पर मानव की प्रारंभिक हलचल का समय था।"[18] श्रीकृष्ण ओझा जिन्हें निषाद नाम से पुकारते हैं वे आग्नेय जाति के ही लोग हैं। सिंधु-घाटी सभ्यता अथवा उसके पूर्व जो प्राग्वैदिक संस्कृति भारत में थी वह इन्हीं जातियों के द्वारा अस्तित्व में आई थी।

भारतीय संस्कृति के विकासक्रम में दिनकर द्रविड़ जाति को तीसरी प्रमुख जाति स्वीकार करते हैं।। पाश्चात्य विद्वानों ने द्रविड़ों को भी विदेशी जाति सिद्ध करने का कुटिल प्रयास किया हैं। इस संबंध में वे कहते हैं- "आधुनिक इतिहासकारों का चक्र ऐसा तेज़ी से चला कि अब विद्वान भी यही मानते हैं कि नीग्रो, औष्ट्रिक, द्रविड़ और आर्य ये

सारे के सारे लोग इस देश में बाहर से ही आए और इस देश की धरती लाखों वर्ष तक आदमी की आबादी से खाली यों ही बंजर पड़ी हुई थी। यूरोपीय तर्क आधुनिक बुद्धि का सम्मोहनास्त्र है। इसका उपयोग तो वे ही करते हैं जिनका उद्देश्य काटना हैं, पसंद यह उनको भी आता है जो काटे जाते हैं।"[19] इस जाति के भारतीय अथवा अभारतीय होने के संदर्भ में वे प्रसिद्ध इतिहासकार हर्बर्ट रिजले के मत को उल्लेखित करते हैं- "प्रत्युत, वर्षों पूर्व हर्बर्ट रिजले ने भी यही बात कही थी। द्राविड़ सभ्यता का, भाषा-शास्त्र और नृवंश-शास्त्र के अनुसार, अध्ययन करने के बाद सबसे पूर्व रिजले ने ही यह स्थापना रखी थी कि द्रविड़ भारत में बाहर से नहीं आए, प्रत्युत, वे दक्षिण भारत के मूल निवासियों की संतान हैं।"[20] इस मत का समर्थन श्री रामचंद्र दीक्षितर भी करते हैं। अत: दिनकर स्पष्ट रूप से पहले तो द्रविड़ को कोई विशेष जाति नहीं मानकर दक्षिण भारत में निवास करने वाली जनता के संबोधन के अर्थ में प्रयोग करते हैं तथा उस जनता को मूल और शुद्ध भारतीय भी घोषित करते हैं।

आर्य जाति के भारतीय अथवा अभारतीय होने को लेकर विद्वानों में पर्याप्त मतांतर है। प्रजाति सिद्धांत के आधार पर पश्चिम के विद्वानों ने यह घोषणा भी की कि आर्य जाति मध्य एशिया अथवा रूस के दक्षिण से भारत में आई। ऋग्वेद के उषासूक्त के आधार पर कुछ विद्वान उनका जन्म उत्तरी ध्रुव ठहराते हैं। ऐसी प्रचलित धारणाओं में बाबु गुलाबराय चार मुख्य सिद्धांतों का वर्णन करते हैं। वे लिखते हैं- "इसमें चार मत प्रमुख है: पहला; जर्मन विद्वानों का मत, जिसके अनुसार आर्यों का मूल निवास जर्मन एवं रूस के बीच है। दूसरा; यूरोपियन विद्वानों का जो मध्य एशिया को आर्यों का मूल देश मानते हैं। तीसरी; पारसी विद्वानों का ईरान को ही मूल आर्य प्रदेश मानने वाला। चौथा मत उन प्रगल्भ भारतीय विद्वानों का हैं जो भारत को ही आर्यों का मूल देश मानता है।"[21] किंतु अभी तक किसी भी मत की पूर्ण पुष्टि नहीं हो पाई है।

दिनकर इनमें से भारतीय अवधारणा को प्राथमिकता देते हैं। वे कहते हैं- "पश्चिमी विद्वान यह कहते हैं कि आर्य पहले मध्य एशिया अथवा रूस के दक्षिण भाग में रहते थे और वही फैलकर वे यूरोप और भारत गए। यदि यह बात ठीक है तो आर्यों ने वेद के समान कोई प्रामाणिक साहित्य अपने मूल-स्थान में क्यों नहीं छोड़ा? यह भी कि यदि आर्यों का मूल स्थान भारत के बाहर था तो ऐसा क्यों है कि संस्कृत के शब्द भारत की सभी भाषाओँ में तो बहुतायत से मिलते हैं, किंतु यूरोप की भाषाओँ में उनकी संख्या अत्यंत न्यून है?"[22] दिनकर जिन आधारों पर आर्यों को भारतीय बताते हैं, उनको प्रश्न के रूप में प्रस्तुत करते हैं। अत: उनके ये सभी आधार और प्रश्न निराधार नहीं हो सकते हैं। संसार की सबसे पुरानी जीवित भाषा संस्कृत है और साहित्य वेद है। इस तथ्य पर अब कोई संशय नहीं रह गया है। किंतु, वेदों में किसी मध्य एशियाई या यूरोपीय स्थान का कोई वर्णन उपलब्ध नहीं है।

दिनकर बताते हैं कि आर्यों ने वेदों में अपने देश को 'सप्तसैंधव' कहकर पुकारा हैं। अत: इस आधार पर वे कहते हैं- "ऋग्वेद के अनुसार आर्यों का देश सप्त-सैंधव था। यही वः भू-भाग है, जहाँ मोहनजोदड़ो-सभ्यता के प्रमाण पाए गए हैं। आर्य संस्कृति से संबद्ध जातियों के अब तक जितने भी पुराने निशान मिले हैं, उनमें से कोई भी उतना पुराना नहीं है, जितना मोहनजोदड़ो और हड़प्पा का प्रमाण। यदि किसी प्रकार यह साबित किया जा सके कि मोहनजोदड़ो की सभ्यता आर्यों की सभ्यता थी, तभी यह कहने का एक ठोस आधार मिल सकता है कि आर्यों का मूल-अभिजन मध्य एशिया नहीं, भारतवर्ष था।"[23] हालाँकि अभी तक सिंधु-सभ्यता में प्राप्त लिखित अवशेषों की लिपि

को पढ़ा नहीं जा सका है। अत: इस आधार पर आर्यों का जन्म भारत में मानना संदिग्ध है।

लेकिन, दिनकर केवल पुरावशेषों के आधार पर ही अपनी स्थापना की पुष्टि नहीं करते हैं। उन्होंने भाषा-विज्ञान के आधार पर भी इस धारणा को पुष्ट करने का प्रयास किया हैं। इस संबंध में वे लिखते हैं- “आर्यों की मूल-भाषा संस्कृत की रक्षा केवल भारतवर्ष में हुई। और देशों में संस्कृत के कुछ थोड़े-से शब्द बचे हैं, जो कठिनाई से पहचाने जाते हैं। भारत में वे अपने मूल रूप में विद्यमान हैं। और देशों में आर्यों की मूल-भाषा रूपांतरित होकर नई-नई भाषाओं में बदल गई। केवल भारत में संस्कृत ने नई भाषाओं को जन्म देकर भी अपने अस्तित्व को कायम रखा है। उसमें आज भी पत्र निकलते हैं, नया साहित्य लिखा जाता है और बौद्धिक विषयों पर शास्त्रार्थ चलता है।”[24] इस भाषाई आधार पर अवश्य ही आर्यों को मूल भारतीय स्वीकार किया जा सकता है।

इसपर भी दिनकर आर्य जाति की उपस्थिति भारत में कम-से-कम ईसा के पद्रंह सौ साल पहले तो स्वीकार करते ही हैं। कुछ अनुमानों का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं- “ईसा पूर्व 1500 के आस-पास आर्यभाषा रूस से दक्षिण-पूर्व की और सामी इलाकों, ईरान और भारतवर्ष तक पहुँच चुकी थी। और उत्तर में, कदाचित वह लिथुएनिया तक फ़ैल चुकी थी।............अवश्य ही आर्यों का मूल स्थान रूस के दक्षिण अथवा दक्षिणी रूस था, जहाँ से उनकी भाषा ने एक ओर लिथुएनिया में प्रवेश पाया, दूसरी ओर वह मिस्त्र, ईरान और मेसोपोटामिया फ़ैल गई। अनुमान होता है कि आर्य भाषा का जब इतना प्रसार हो चुका था, तब आर्य लोग भारत पधारे। संस्कृत भाषा इस देश में आर्यों के साथ ही आई और जिस उत्कृष्ट संस्कृति, साहित्य और सभ्यता के कारण आर्य सारे विश्व के इतिहास में प्रख्यात हैं, उसकी रचना उन्होंने इसी भारतवर्ष में की। अतएव मूल-अभिजन उनका चाहे जहाँ रहा हो, किंतु उनका अपना देश भारतवर्ष हुआ।”[25] अत: दिनकर आर्यों के मूल जन्म स्थान के प्रश्न को प्रश्न के रूप में ही छोड़ देना उचित समझते हैं। वे इस पक्ष में कोई स्थाई स्थापना नहीं देते हैं। उनके अनुसार आर्य जाति विश्व में जहाँ कही भी जन्मी हो, लेकिन उसका विकास भारतभूमि पर ही हुआ। जिसका स्वयं आर्यों ने वेदों में अपनी मातृभूमि के रूप में वंदन किया है।

वस्तुतः भारतीय संस्कृति की ऐतिहासिकता के संदर्भ में अनेक मत-मतांतर प्रचलित रहे हैं। इसका प्रमुख कारण स्पष्ट करते हुए गीतेश शर्मा कहते हैं- “भारतीय संस्कृति को लेकर गंभीरता से शोध-कार्य बहुत कम हुए हैं। कड़वी सच्चाई यह है कि ये शोध-कार्य भारतीयों ने कम, विदेशीयों ने ज्यादा किए हैं। वाराणसी में पहले संस्कृत कॉलेज की स्थापना अंग्रेजों ने की। दूसरा, कॉलेज कलकत्ता में स्थापित किया। पहली बार संस्कृत से विभिन्न भाषाओं में अनुवाद की शुरुआत भी उन्होंने की और संस्कृत में लिखी सामग्री को आम आदमी तक पहुँचाया। दुर्लभ पांडुलिपियों और ग्रंथो को संग्रहीत करने तथा शोधार्थियों और आम-पाठकों को सुव्यवस्थित कराने के उद्देश्य से विलियम जोंस (1746-1794) ने सन 1784 में एशियाटिक सोसायटी की कलकत्ता में स्थापना की। यही नहीं, हमारे देश के अज्ञात-अल्पज्ञात प्राचीन इतिहास के अनुसंधान के लिए पुरातात्विक विभाग की स्थापना भी अंग्रेजों ने की।”[26] अत: भारत के सांस्कृतिक इतिहास की खोज उन्होंने आरंभ की जो इसकी संपत्ति और समृद्धि को लूट रहे थे। ऐसी स्थिति में उन्होंने किस प्रकार के इतिहास से भारतीयों को रु-ब-रु करवाया होगा, इसके प्रमाण उस समय के ऐतिहासिक दस्तावेज है।

निष्कर्ष

भारतीय संस्कृति स्वयं में एक विशाल विषय है। यह लिखने-पढ़ने और देखने-समझने में जितना

सरल और स्पष्ट दिखाई देता है; वस्तुत: है नहीं। इसका इतिहास विश्व में सबसे पुराना है। इसमें विश्व की सभी नस्लों के वंशज निवासरत हैं। उनकी सभी प्रवृतियों के दर्शन भी इसमें होते हैं। ऐसी स्थिति में इसके इतिहास लेखन का कार्य और भी दुस्तर हो जाता है। दिनकर ने इसी कारण, इसके लिए साहित्य और दर्शन की दृष्टि का उपयोग किया। आधुनिक विज्ञान के अनुसार मनुष्य के वर्तमान स्वरूप का गठन कोई तीन लाख वर्ष पूर्व हुआ होगा। यह घटना कहाँ पूर्ण हुई, इस संदर्भ में वह मौन है? कतिपय पंडितों ने भारतभूमि पर मनुष्य जाति को बाहरी घोषित किया है। किंतु, दिनकर विज्ञान के बताए वर्ष के समय ही भारत में मनुष्य का अस्तित्व मानते हैं। वादनगर में तीन लाख वर्ष पुराना आदिनीग्रो का नर कंकाल इसकी पुष्टि करता है। अत: यह भी संभव है कि वर्तमान मनुष्य का अंतिम गठन भारतभूमि पर ही हुआ हो। हालाँकि, यह पूर्ण विश्वास के साथ नहीं कहा जा सकता है। किंतु, इस तथ्य को भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि भारत में मनुष्य का लाखों वर्षों से निवास कर रहा है।

भारत की संस्कृति के निर्माण को लेकर भी अनेक धारणाएँ प्रचलित है। कारण, गीतेश शर्मा ने स्पष्ट किया है- इसका इतिहास सबसे पहले विदेशी लुटेरों ने लिखा। जिनका सांस्कृतिक इतिहास कुछ दो-ढाई हजार वर्ष पुराना है। वे इस दंभ में थे कि उनके पूर्वजों ने ही मनुष्य जाति को संस्कृति की अवधारणा दी है। अत: जब वे भारत आए तो वे इसी भ्रम में रहे। किंतु, जब उन्होंने यहाँ की हजारों वर्ष पुरानी संस्कृति को देखा तो अचंभित रह गए। शासन करने, संपदा लुटने और क्रिस्तान बनाने के उद्देश्य से उन्होंने इसका भ्रामक इतिहास लिखा। दिनकर उनकी सभी भ्रामक धारणाओं का सम्यक, तटस्थ और प्रामाणित दृष्टि से विश्लेषण करते हैं। साथ में, सत्य स्थापनाओं से उसकी प्राचीनता और समृद्धता को भी स्थापित करते हैं। इस दृष्टि से 'संस्कृति के चार अध्याय' गौरवग्रंथ है। आधुनिक जनविज्ञान विश्व की सभी जातियों को मुख्य तीन नस्लों क्रमश: काकेशियन, इथोपियन और मंगोल से जनित मानता है। जिनके वंशज भारत में हजारों वर्षों से रहते आ रहे हैं। दिनकर इनके इतर चौथी आर्य जाति का अस्तित्व भी भारत में बताते हैं। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से विश्व की सभी भाषाएँ तीन मुख्य भाषाओं से निकली है। इन तीनों के भाषा-भाषी भी भारत में सदियों से निवास कर रहे हैं।

दिनकर भारतीय संस्कृति के मूल उत्स जाने की राह को अभी तक अनसुलझा बताते हैं। किंतु, इसके सबसे प्राचीन वंशज के रूप में नीग्रो जाति को मानते हैं। आग्नेय जाति भारत में आग्नेय कोण से आई थी। इन्होंने पहले-पहल इसमें समन्वय का बीज बोया और वर्तमान भारतीय संस्कृति की रूपरेखा बननी आरंभ हुई। द्रविड़ जाति को उन्होंने मूलत: भारतीय माना हैं। आर्य जाति को लेकर प्राय: यह धारणा प्रचलित है कि वह बाहर से आई थी। उन्होंने भारत पर आक्रमण कर यहाँ की संस्कृति को हटाकर अपनी संस्कृति विकसित की। दिनकर के अनुसार जिन स्थानों से वे आए थे उन स्थानों पर उनके कोई पदचिह्न क्यों नहीं हैं? न उनके साहित्य में उनका वर्णन है? अत: वे उनके मूल अभिजन के प्रश्न को अक्षुण्ण छोड़ देते हैं। इस पर वे आर्यों को वर्तमान भारतीय संस्कृति के स्वरूप संगठनकर्ता के रूप में अवश्य स्वीकार करते हैं। उनके इस स्तुत्य कार्य के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। वे भारतीय संस्कृति को विश्व की सबसे पुरानी जीवित संस्कृति होने पर गर्व करते हैं। जिसमें उन्होंने जन्म लिया और जिसकी थोड़ी-बहुत सेवा करने का सुअवसर उन्हें प्राप्त हुआ।

संदर्भ सूची

1. दिनकर रचनावली (सं. नंदकिशोर नवल और तरुण कुमार), (खंड-ग्यारह) (कुल खंड-चौदह), लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2011, पृ.412
2. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.X
3. महादेवी वर्मा : भारतीय संस्कृति के स्वर, हरीकृष्ण प्रिंटर दिल्ली, वि.सं.2040 पृ.24
4. दिनकर रचनावली (सं. नंदकिशोर नवल और तरुण कुमार), (खंड-आठ) (कुल खंड-चौदह), पृ.83
5. वही : (खंड-नौ), (कुल खंड-चौदह), पृ.184
6. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.26
7. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.27
8. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.27
9. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह),पृ.27
10. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह),पृ.27
11. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह),पृ.27
12. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.28
13. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.28-29
14. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.29
15. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.29
16. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.29
17. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.30
18. श्रीकृष्ण ओझा : भारतीय संस्कृति के मूल तत्व, आदर्श प्रकाशन, जयपुर पृ.26-27
19. दिनकर रचनावली (सं. नंदकिशोर नवल और तरुण कुमार), (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.33
20. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.35
21. बाबु गुलाबराय : भारतीय संस्कृति, पृ.09
22. दिनकर रचनावली (सं. नंदकिशोर नवल और तरुण कुमार), (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.37
23. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.39
24. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.38
25. वही : (खंड-दस) (कुल खंड-चौदह), पृ.40
26. गीतेश शर्मा : भारतीय संस्कृति और हिंदुत्व, पृ.09